2005:CGHC:5034

एकल पीठ

उच्च न्यायालय बिलासपुर, छत्तीसगढ़

द्वितीय अपील क्रमांक 49/2004

द्वितीय अपील अंतर्गत धारा 100 व्यवहार प्रक्रिया संहिता, 1908

अपीलार्थीगण :– 1) बोधन प्रसाद, पिता टीकाराम, उम्र लगभग 69 वर्ष

2) ययाति प्रसाद, पिता बोधन प्रसाद, उम्र लगभग 32 वर्ष

3) ओमप्रकाश पिता बोधन प्रसाद, उम्र लगभग 30 वर्ष

पता:– सभी कृषक, निवासी– ग्राम भुरकी, तहसील बेमेतरा, जिला दुर्ग (छ0ग0)

बनाम

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उत्तरदाताः. छ0ग0 राज्य द्वारा कलेक्टर, दुर्ग, जिला दुर्ग

स्वत्व की घोषणा, स्थायी निषेधाज्ञा और कब्जे के लिए दावा अपील

मूल्यांकन 1,100/–

अदा किया न्यायालय शुल्क 112/–

(जैसा कि अधीनस्थ न्यायालय में है)

द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, (एफ.टी.सी.) बेमेतरा, जिला दुर्ग (छ0ग0) द्वारा पारित सिविल अपील क्रमांक 29–ए/2003 में दिनांक 11.12.2003 के निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, जो व्यवहार न्यायाधीश वर्ग–1, बेमेतरा, जिला दुर्ग (छ0ग0) द्वारा पारित व्यवहार वाद क्रमांक 12–ए/1987 में दिनांक 14.1.1999 के निर्णय और डिक्री से प्रोद्भूत है, वादीगण यह स्वीकार प्रस्तुत करते हैं, कि जिसमें निम्नलिखित तथ्यों पर विधि के सारवान प्रश्न सम्मिलित हैं।

उच्च न्यायालय बिलासपुर, छत्तीसगढ़

द्वितीय अपील क्रमांक 49/2004

बोधन प्रसाद व अन्य

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

वादीगण के अधिवक्ता, (श्री एम. के. भादुड़ी)

आदेश

(दिनाँक 06–09–2005)

सुनील कुमार सिन्हा, (न्यायमूर्ति)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(1) अपीलार्थी/वादीगण, जो दोनों न्यायालयों में हार चुके हैं,ने द्वितीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश (एफ.टी.सी.) बेमेतरा, जिला, दुर्ग (छ0ग0) द्वारा सिविल अपील क्रमांक 29–ए/2003 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 11.12.2003 से व्यथित होकर यह द्वितीय अपील दायर की है, जो व्यवहार न्यायाधीश वर्ग–1, बेमेतरा, जिला दुर्ग (छ.ग.) द्वारा सिविल वाद क्रमांक 12–ए/1987 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 14.1.1999 से प्रोद्भूत है।

(2) संक्षिप्त तथ्य यह है कि वादीगण ने यह उद्घोषणा करने के लिए वाद दायर किया था कि राजस्व (सिलिंग) प्रकरण संख्या 167–169–बी/90 (3) वर्ष 1975–76 में दिनाँक 22.6.1982 को सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को उनके विरुद्ध शून्य और निष्क्रिय घोषित किया जाए। आगे यह भी प्रार्थना की गई कि वादीगण को वाद की अनुसूची– 'ए' में वर्णित 4.87 एकड़ भूमि को छोड़कर, 19.95 एकड़ की सम्पूर्ण भूमि का स्वामी घोषित किया जाए। उन्होंने प्रतिवादी/राज्य को अधिशेष भूमि को अन्य को वितरित करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा का भी दावा किया। उन्होंने उपरोक्त आदेश में घोषित व्यक्ति के विरूद्ध) आरोप पत्र दाखिल किया है, तथा इस भूमि पर कब्जा वापस दिलाने की भी प्रार्थना की है।

(3) वादीगण का मामला यह है कि वे वाद भूमि के संयुक्त स्वामी हैं। वादी क्रमांक 1, बोधन प्रसाद परिवार के कर्ता हैं। उनके विरूद्ध मध्य प्रदेश कृषि जोत उच्चतम सीमा भूमि अधिनियम, 1960 (जिसे आगे अधिनियम कहा जाएगा) के अंतर्गत अपर आयुक्त, रायपुर संभाग, रायपुर द्वारा उपरोक्त अधिकतम सीमा मामले के तहत कार्यवाही की गई थी और मामले का विषय इस – परिवार द्वारा धारित संपूर्ण संपत्ति थी जिसका क्षेत्रफल 351 एकड़ था। इस मामले में दिनांक 06.08.1976 को आदेश पारित किया गया और उक्त 351 एकड़ क्षेत्रफल में से 69.80 एकड़ अधिशेष घोषित किया गया और राज्य में निहित करने का निर्देश दिया गया। वादीगण ने उक्त आदेश के विरूद्ध राजस्व मंडल, ग्वालियर, मध्य प्रदेश के समक्ष अपील दायर की और राजस्व मंडल द्वारा दिनाँक 04.10.1978 को पारित आदेश द्वारा मामले को पुनः अपर आयुक्त, रायपुर के न्यायालय में प्रतिप्रेषित कर दिया गया। अपर आयुक्त, रायपुर ने उक्त प्रतिप्रेषित आदेश के पश्चात पुनः मामले की सुनवाई की तथा दिनांक 09.11.1979 के आदेश द्वारा यह माना कि 69.80 एकड़ के स्थान पर 28.95 एकड़ अधिशेष भूमि है तथा यह राज्य में निहित रहेगी। तत्पश्चात वादी क्रमांक 1 की पत्नी तथा वादी क्रमांक 1 द्वारा आपत्तियां प्रस्तुत की गई, परन्तु आपत्तियां अस्वीकार कर दी गई। इस अस्वीकृति आदेश के विरूद्ध) वादी क्रमांक 1 ने पुनः राजस्व मंडल के समक्ष अपील दायर की और अन्ततः दिनांक 28.05.1981 के आदेश द्वारा राजस्व मंडल ने पुनः अपर आयुक्त द्वारा पारित आदेश को निरस्त कर दिया और मामला पुनः अपर आयुक्त, रायपुर को प्रतिप्रेषित कर भेज दिया गया और उसके बाद अपर आयुक्त, रायपुर ने दिनांक 22.06.1982 को आदेश पारित कर 28.95 एकड़ अधिशेष भूमि को घटाकर 19.95 एकड़ कर दिया जिसमें से 9 एकड़ भूमि उनकी नहीं रह गई और अन्ततः 19.95 एकड़ भूमि अधिशेष भूमि घोषित कर दी गई और अन्ततः राज्य को सौंपने का निर्देश दिया गया जिसके लिए अंतिम सूचना का आदेश दिया गया। वादीगण ने यह व्यवहार वाद इस बहाने से दायर किया कि वास्तव में अपर आयुक्त के आदेश 19.95 एकड़ जमीन को अधिशेष घोषित करने के संबंध में निर्णय विधि के अनुसार नहीं है क्योंकि वादी के परिवार द्वारा कब्जे में दिखाए गए विभिन्न खसरा नंबरों के क्षेत्रों के संबंध में राजस्व अभिलेख में कुछ त्रुटियों की ओर इशारा करते हुए, वादी ने दावा किया कि वास्तव में, 19.95 एकड़ भूमि के बजाय, अतिरक्ति आयुक्त को केवल 4.87 एकड़ भूमि को राज्य के साथ निहित करने के लिये अधिशेष भूमि घोषित करना चाहिए था, इसलिये अतिरिक्त आयुक्त द्वारा दिनांक 22.06.1982 को राजस्व (सिलिंग) प्रकरण संख्या 167–169–बी/90 (3) वर्ष 1975–76 में पारित आदेश गलत है और इसे शून्य और निष्क्रिय घोषित किया जाना चाहिए और वादी को 4.87 एकड़ भूमि को छोड़कर 19.95 एकड़ के वादग्रस्त भूमि का स्वामी घोषित किया जाना चाहिए और इस घोषणा के बाद, भूमि का कब्जा उन्हें सौंप दिया जाना चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(4) राज्य ने वादीगण के तर्कों का खंडन करते हुए अपना लिखित कथन दाखिल किया। उनका तर्क था कि दिनांक 22.06.1982 का आदेश वैध आदेश है और वादीगण पर बंधनकारी है। वादी क्रमांक 1 परिवार का कर्ता था और संयुक्त परिवार के स्वामित्व और कब्जे वाली भूमि के संबंध में उसके द्वारा दाखिल घोषणा पर विचार करने के बाद, परिवार के सदस्यों के हिस्से में आवंटित की जाने वाली भूमि की गणना की गई और उसे छोड़ दिया गया और उसके बाद ही सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिशेष भूमि की घोषणा की गई। इस प्रकार घोषित भूमि का प्रकाशन विधि के अनुसार किया गया था और इसे राज्य के पास निहित कर दिया गया है और शेष भूमि को वादीगण के नाम पर उनकी योग्यता/पात्रता के अनुसार विभाजित करने का निर्देश दिया गया है।

(5) विद्वान विचारण न्यायाधीश ने इस मामले में विभिन्न विवाद्यक तय किए तथा प्रत्येक विवाद्यक का उत्तर देने के पश्चात वादीगण के वाद को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा उक्त राजस्व (सिलिंग) वाद संख्या 167–169–8/90 (3) वर्ष 1975–76 में दिनांक 22.06.1982 को पारित आदेश वैध है तथा यह राजस्व अभिलेखों में वर्णित भूमि के क्षेत्रफल के गलत वर्णन पर आधारित नहीं है, जैसा कि वादीगण द्वारा तर्क दिया गया है। यह आदेश विधिसम्मत है। वादी के खिलाफ प्रभावी और बंधनकारी है, यह आगे अवधारित किया गया कि 19.95 एकड़ भूमि उपरोक्त आदेश द्वारा राज्य के पास निहित है और वादी के वाद को डिक्रित नहीं किया जा सकता।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(6) विचारण न्यायालय द्वारा पारित उक्त निर्णय और डिक्री के विरूद्ध वादीगण ने व्यवहार अपील क्रमांक 29–ए/2003 में अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय के समक्ष दायर की। अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने अपील की सुनवाई के पश्चात, दिनांक 11.12.2003 के आक्षेपित निर्णय और डिक्री के माध्यम से उसे खारिज कर दिया तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि की। प्रथम अपील में पारित इस निर्णय और डिक्री के विरूद्ध वादीगण ने व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अंतर्गत यह द्वितीय अपील दायर की है।

(7) याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि अधीनस्थ न्यायालयों ने यह अवधारित कर विधि की भूल है कि दिनांक 22.06.1982 को उपरोक्त सिलिंग मामले में सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश सही था। उन्होंने तर्क किया कि इस संबंध में निष्कर्ष विपरीत हैं।

(8) विचारण न्यायालय (विवाधक क्रमांक1 के अनुसार) और प्रथम अपीलीय न्यायालय ने इस महत्वपूर्ण बिंदु पर विचार किया है कि क्या राजस्व (सिलिंग) प्रकरण संख्या 167–169–बी/90 (3) वर्ष 1975–76 में दिनांक 22.06.1982 को सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश वादी के

स्वामित्व वाली विभिन्न भूमि के गलत–गलत क्षेत्रों की प्रविष्टियों पर आधारित आदेश था और इस आधार पर यह दूषित है। उचित विश्लेषण के बाद दोनों न्यायालयों ने एक साथ अवधारित किया कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा उपरोक्त राजस्व (सिलिंग) प्रकरण संख्या 167–169–बी/90 (3) वर्ष 1975–76 में दिनांक 22.06.1982 को पारित आदेश राजस्व अभिलेखों में गलत क्षेत्रों की प्रविष्टियों पर आधारित नहीं था और यह वादी पर बंधनकारी था। इस बिन्दु पर इस न्यायालय के पास दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा साथ.साथ दर्ज निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है, और ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा साथ साथ दर्ज किये गये निष्कर्षों की विकृतियों के आधार पर वादी के द्वितीय अपील में कोई गुण दोष नहीं है।

(9) उपर्युक्त के अतिरिक्त, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी मध्य प्रदेश (छत्तीसगढ़) कृषि जोत उच्चतम सीमा अधिनियम, 1960 की धारा 46 के प्रावधानों के आलोक में मामले पर विचार किया है। उक्त अधिनियम की धारा 46 इस प्रकार है:– ''46. सिविल न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र का वर्जन। इस अधिनियम में स्पष्ट रूप से प्रदान की गई बात के सिवाय, किसी भी व्यवहार न्यायालय को कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा:–

(i) किसी ऐसे प्रश्न का निपटारा करना, निर्णय करना या उससे निपटना, जिसे इस अधिनियम के अधीन सक्षम प्राधिकारी द्वारा निपटाया जाना, निर्णय लिया जाना या उससे निपटना अपेक्षित है, तथा

(ii) अधिनियम के अंतर्गत किसी भी मामले में स्थगन प्रदान करना'' अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय ने अवधारित किया है कि वस्तुतः, इस धारा के प्रावधानों के अंतर्गत वर्तमान जैसे मामलों पर सिविल अधिकारिता वर्जित है और इस आधार पर भी वादी का वाद सिविल न्यायालय के समक्ष पोषणीय नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(10) मैंने इस मामले की इस आधार पर भी जाँच की है। अधिनियम की धारा 46 सिविल न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को वर्जित करती है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, यह प्रावधानित करती है कि किसी भी सिविल न्यायालय को किसी ऐसे प्रश्न का निपटारा करने, निर्णय लेने या उससे निराकरण किया जाना का अधिकार नहीं होगा, जिसे इस अधिनियम के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा निराकरण किया जाना, निर्णय लिया जाना या उससे निराकरण किया जाना अपेक्षित है। निश्चित रूप से, व्यवहार न्यायालय के समक्ष वादी द्वारा उठाए गए आधार इस धारा के प्रावधानों के अंतर्गत आने वाले आधार थे क्योंकि वादी ने राजस्व अभिलेखों में भूमि के क्षेत्रों के गलत वर्णन का आधार लिया था और सक्षम प्राधिकारी ने उन वर्णनों के आधार पर इस मामले का गलत तरीके से निर्णय

लिया था। वास्तव में, यह सक्षम प्राधिकारी के अनन्य अधिकारिता में आने वाला मामला था और अधिनियम की धारा 46 के आधार पर, किसी भी सिविल न्यायालय को इस आधार पर वाद चलाने का अधिकार नहीं था कि प्राधिकारी से उपरोक्त आधार पर उनके द्वारा उठाए गए एक पक्ष के दावे का निर्णय करने में विधि की त्रुटि हुई है। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने सही रूप से यह विचार किया है कि यह वाद स्वयं सिविल न्यायालय के समक्ष पोषणीय नहीं था।

(11) मुख्य रूप से, भले ही किसी विशेष विधि द्वारा कोई रोक वर्जना लगाई गई हो, सिविल न्यायालय विशेष परिस्थितियों में सिविल वादों पर विचार कर सकते हैं। अपवाद प्रिवी काउंसिल के पुराने निर्णय द्वारा निर्धारित किया गया है, जो सचिव राज्य शासन बनाम मास्क एंड कंपनी, आल इंडिया रिर्पोटर 1940 प्रिवी काउंसिल, 105 के मामले में रिपोर्ट किया गया था। इसने निर्धारित किया कि सिविल अधिकारिता का बहिष्कार स्पष्ट रूप से व्यक्त या स्पष्ट रूप से निहित होना चाहिए। यहां तक कि जहां इसे बाहर रखा गया है, सिविल न्यायालयों के पास उन मामलों की जांच करने का अधिकार है जहां अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन नहीं किया जाता है या वैधानिक न्यायाधिकरण न्यायिक प्रक्रिया के मूल सिद्धांतों के अनुसार कार्य नहीं करता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

मध्य भारत जागीर उन्मूलन अधिनियम के तहत एक मामले पर विचार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि, जहां सिविल अधिकारिता वर्जित था, तहसीलदार के आदेश को सिविल न्यायालयों में इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि वह ''अमान्य'' है। (कृपया आल इंडिया रिपोर्टर 1979 अनुसूचित जाति 1936 रघुनाथ (मृत) द्वारा एल.आर. बनाम कन्हिया (मृत) द्वारा एल.आर. देखें)

ऐसी किसी भी घटना पर वादी ने सक्षम प्राधिकारी के आदेश की वैधता को चुनौती नहीं दी है, तब भी अन्यथा भी वाद पोषणीय नहीं था।

(12) धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि धारा 100 के तहत द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अधिकारिता का दायरा और प्रयोग अपील स्वीकार किये जाने के समय तैयार किए गए विधि के सारवान प्रश्नों या उसके लिए कारण दर्ज करने के बाद बाद के चरण में तैयार किए गए अतिरिक्त सारवान विधि के प्रश्नों तक सीमित है। इससे यह स्पष्ट होता है कि धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता के संशोधित प्रावधानों के तहत अधिकारिता के प्रयोग के लिए विधि के सारवान प्रश्नों का अस्तित्व अनिवार्य है। (कृपया (2004) खंड V उच्चतम न्यायालय प्रकरण संख्या 762 त्यागराजन और अन्य बनाम श्री वेणु गोपाल स्वामी बी. कोइल और अन्य)। जो विधि के सारवान प्रश्न का निर्णय करता है, यह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संतोष हजारी बनाम पुरुषोत्तम

तिवारी (मृतक) द्वारा एल. आर. (2001) 3 एससीसी 179 में अवलोकित किया गया है कि ''विधि का कोई ऐसा विवाद्यक जो दो रायों को स्वीकार नहीं करता, वह विधि का प्रस्ताव हो सकता है, लेकिन विधि का कोई सारवान प्रश्न नहीं हो सकता। ''सारवान'' होने के लिए विधि का कोई प्रश्न बहस किये जाने योग्य होना चाहिए, देश के विधि या बंधनकारी मिसाल द्वारा पहले से तय नहीं होना चाहिए, और मामले के निर्णय पर इसका महत्वपूर्ण प्रभाव होना चाहिए, अगर किसी भी तरह से उत्तर दिया जाए, जहां तक इससे पहले पक्षों के अधिकारों का संबंध है। मामले में शामिल विधि का प्रश्न होने के लिए पहले अभिवचनों में इसके लिए एक आधार होना चाहिए और प्रश्न न्यायालय द्वारा प्राप्त तथ्यों के स्थायी निष्कर्षों से उभरना चाहिए और मामले के उचित निर्णय के लिए विधि के उस प्रश्न को तय करना आवश्यक होना चाहिए। उच्च न्यायालय के समक्ष प्रथम बार उठाया गया एक बिल्कुल नया विवाद्यक मामले में शामिल प्रश्न नहीं है जब तक कि यह मामले की जड़ तक न जाए। इसलिए, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा कि विधि का कोई प्रश्न सारवान है और मामले में शामिल है या नहीं सर्वोपरि समग्र विचार यह है कि एक निर्णायक निर्णय लेने की आवश्यकता है। सभी चरणों में न्याय करने के अपरिहार्य दायित्व और किसी भी वाद के जीवन में विस्तार से बचने की अनिवार्य आवश्यकता के बीच विवेकपूर्ण संतुलन है।''

(बल दिया गया)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(13) इस न्यायालय की राय में, याचिका में विधि का कोई भी सारवान प्रश्न अन्तर्वलित नहीं है। याचिका को सुनवाई हेतु स्वीकार किये जाने के चरण में ही खारिज किया जाता है। वाद व्यय संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जा रहा है।

सही/–
सुनील कुमार सिन्हा
न्यायमूर्ति

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Hemant Kumar Thawait (Adv.)